भर्तृहरि के दर्शन में भाषा, शब्दार्थ और उनके सम्बन्ध

डॉ. अंकित चौरसिया

दिल्ली

इह त्रिणि ज्योंतिषि त्रयः प्रकाशाः स्वरुपपररूपयोः अवधोतकाः I तद्धथा– योयम जातवेदाः यश्च पुरुषेष्वान्तरः प्रकाशो यश्च प्रकाशाप्रकाशयोः प्रकाशयिता शब्दख्यः प्रकाशस्तत्रेतत सर्वमुपनिबद्हम यावत स्थानु चरिष्णु च I

हरिवृति, वाक्यपदीय (खण्ड १, कारिका १२)

इसमें यहाँ कहा गया है कि संसार में तीन प्रकार के प्रकाश है जो स्वयं को प्रकाशित करते है और अन्यों को भी प्रकाशित करते है जिसमे पहला आग, सूर्य और टॉर्च इत्यादि हैI दूसरा आत्मा है जो स्वयं को और बाह्य–जगत को प्रकाशित करती हैI तीसरा भाषा है जो उपर्युक्त दोनों को प्रकाशित करती है अर्थात सत और असत दोनों को प्रकाशित करती है चाहे वो प्रकाश हो या अप्रकाशI आग, आत्मा इत्यादि तभी जाने जाते है जब वह भाषा द्वारा प्रकाशित होते हैI[1]

भाषा विशेष रूप से मानव–जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू हैंI दो व्यक्तियों के मध्य संवाद स्थापित करने में भाषा एक सशक्त माध्यम हैंI भाषा पीढियों के विचारो और अनुभवों को संरक्षित रखती हैं, और भाषा में निहित शब्द–अर्थ/वाक्य–वाक्यार्थ के रूप में वक्ता और श्रोता के मध्य सम्बन्ध को सहज बनाकर सम्प्रेषण को पूर्ण करती हैं I यदि संक्षेप में भाषा की परिभाषा को देखा जाये तो, 'भाषा विचारो के आदान–प्रदान का माध्यम हैंI'

व्याकरण–दर्शन की परम्परा में वाक्यपदीयम के प्रणेता भर्तृहरि का एक मौलिक विचारक के रूप में अमिट स्थान हैं I वाक्यपदीयम में तीन कांड हैं– ब्रह्मकाण्ड, वाक्यकाण्ड और पदकाण्डI तीसरे काण्ड को प्रकीर्णकाण्ड भी कहा जाता हैंI ब्रह्मकाण्ड में शब्दब्रह्म का स्वरुप तथा उससे होने वाली श्रृष्टि–प्रक्रिया पर विचार किया गयाI यह काण्ड आकार में सबसे छोटा हैं लेकिन चिंतन में उतना ही गहरा हैंI वाक्यकाण्ड में ४६७ कारिकाओ में वाक्य और वाक्यार्थ के स्वरुप पर विमर्श हैं, प्रसंगतः इसी में व्याकरण दर्शन की परम्परा पर भी संक्षिप्त चर्चा हैंI तीसरा प्रकीर्णकाण्ड/पद–काण्ड हैं जो आकार में सबसे विशाल हैंI इसमें १३२७ कारिकाये हैं, जिन्हें विषयानुसार कई समुद्देशो या प्रकरणों में विभाजित किया गया हैं– इन समुद्देशो में

[1] डी एन तिवारी, डायनामिक्स ऑफ़ लेंग्वेज : फिलोसफी ऑफ़ दि वर्ल्ड ऑफ़ दि वड्र्स, वोल्यूम १, डी. के. प्रिंटवर्ल्ड नईदिल्ली. २०२२

जाति,द्रव्य,सम्बन्ध, गुण, दिक्, साधन, क्रिया, काल, पुरुष, संख्या, लिंग, वृत्ति या समास आदि वैयाकरण की भाषा में निष्पत्ति व तत्सम्बन्धी प्रक्रियाओ का निरूपण हैं I

वाक्यपदीयम पर प्राचीन काल से वर्तमान समय तक अनेक टीकाएँ हरिवृषभ, हेलाराज एवं पुण्यराज द्वारा लिखी गई हैंI भर्तृहरि ने अपने ग्रन्थ वाक्यपदीयम में मुख्यरूप से शब्द, वाक्य, स्फोटवाद(अर्थ–प्रकाशन इकाई), वाक्यार्थ(प्रतिभा–सिद्धांत), शब्द–ब्रहम, जाति, व्यक्ति, द्रव्य, विवर्तवाद और परिणामवाद को कारिकाओ के माध्यम से बड़ी सहजता से व्याख्यायित करने का प्रयास किया हैंI भर्तृहरि का मानना हैं कि शब्द स्फोटात्मक तथा अर्थ प्रतिभात्मक होता हैं I इसी श्रृंखला में भर्तृहरि ने नैयायिको तथा मीमांसको के सिद्धांतो का भलीभाँति शास्त्रार्थ के माध्यम से उनकी समीक्षा करते हुए भारतीय भाषा–दर्शन को पुष्पित और पल्ल्वित होने का अवसर दियाI

"सर्वप्रथम यदि एतिहासिक रूप से दृष्टिपात किया जाये तो परम–प्रमाण ऋग्वेद में वाक् की श्रृष्टि के नियामक के रूप में महत्ता वर्णित की गई, अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता हैं कि शब्द या पर(आप्त)–वचन के प्रमाण के रूप में स्थापित होने के पहले ही वाक् या भाषा या शब्द की महत्ता प्रतिपादित हो चुकी थीI परन्तु यह बात भी द्रष्टव्य हैं कि न तो ऋग्वेद में और न ही सूत्रकाल में वाक् उच्चरित शब्दों तक सीमित रहा है, अपितु यह गुहा या आत्मा में स्थित महान परम देवता हैं, जिसके कारण शब्द–भावना का भी अविर्भाव देखा जाता हैं और यही नहीं, जिसके कारण 'शब्दना–व्यवहार' संभव होता हैं और समाज में बोध की प्रक्रिया भी पूर्ण होती देखी जाती हैI संभवतः इसी से कयास लगाया जा सकता है कि इसी परम्परा का अनुसरण करते हुए आचार्य पाणिनि, आचार्य पतंजलि और भाषा–दार्शनिक भर्तृहरि अपने विचारो को मूर्तरूप देते रहे और सिद्धांतो को पुष्पित और पल्लवित करते रहे I भाषा लिपि या उच्चरित शब्द मात्र नही हैं, अपितु विचारशब्द रूप हैंI भर्तृहरि का यह सिद्धांत, जोकि कई तरह से व्याख्यायित हुआ हैं, इसी परम्परा की देन हैंI"

शब्द का स्वरुप–

पतंजलि व्याकरण महाभाष्य के प्रथम आहिनक में प्रश्न उठाते हैं कि शब्द क्या हैं?[2] पतंजलि का अभिमत हैं कि शब्द द्रव्य, क्रिया, गुण, जाति से भिन्न हैं I इसका कारण यह प्रतीत होता हैं कि द्रव्य, क्रिया, गुण, जाति चक्षु इन्द्रिय से ग्राह्य हैं,परन्तु शब्द के बारे में शास्त्रीय मत हैं कि शब्द आकाश रूप हैं और लौकिक मत हैं कि शब्द ध्वनि रूप हैं तब शास्त्रीय और लौकिक मतों से यह अभिप्राय प्रतीत होता हैं कि शब्द श्रोत्र इन्द्रिय से ग्राह्य हैंI पतंजलि शब्द के बारे में

[2] अथ गौरित्यत्र कः शब्दः?(महाभाष्य, प्रथम आहिनक, पृष्ठ. ३)

नित्य और कार्य रूप, अपौरुषेय और पौरुषेय दोनों तरह के मतों को समाहित करने के लिए समाधान भाष्य में शब्द को निम्न प्रकार से व्यक्त करते हैं–

शब्द वह हैं जिसके उच्चरित होते ही सास्त्रान्गुलादि धारण करने वाले व्यक्ति का ज्ञान होता हैंI[3] परन्तु संप्रत्यय का मनस से ग्रहण स्वीकारने पर श्रोत्र से शब्द का ग्रहण होता हैं यह लक्षण प्राप्त नही होगा I और यदि श्रोत्र से शब्द ग्राह्य हैं तो इस लक्षण की रक्षा करने जाते हैं तब वर्ण को शब्द मानना होगा क्योंकि पद वर्णों का ही समुदाय कहलाता हैं और वर्ण ही श्रोत्र इन्द्रिय से गृहीत हैं I परन्तु वर्ण तो अर्थप्रत्यायक नही हैं, तब 'शब्द अर्थप्रत्यायक हैं' इस लक्षण की हानि होगीI इस पर महाभाष्य दूसरा समाधान देता हैं– लोक–व्यव्हार में पदार्थ के बोध में समर्थ वर्णरूप ध्वनिसमुदाय शब्द हैंI[4]

अब प्रश्न उठता हैं कि क्या भाषा का कोई तत्वमीमांसीय आधार हैं जैसा कि कहा जाता हैं बाह्य वस्तुओ तक हमारी पहुँच शब्दों के माध्यम से हैं I इसके अलावा भाषा का क्षेत्र बाह्य–जगत से व्यापक हैं क्योंकि भाषा में कई ऐसे शब्द/पद उपस्थित होते हैं जिनका अर्थ बाह्य–जगत में उपस्थित नही होता हैं अतः इस तर्क के आधार पर भाषा का तत्वमीमांसीय आधार हैं या फिर तत्त्वमीमांसीय आधार की खोज इस तर्क के आधार पर की जाये कि हमारा ज्ञान शब्द से अनुविद्ध हैं और यदि हमारा ज्ञान या चेतना शब्द से अनुविद्ध न होती तो जगत–प्रक्रिया का प्रारंभ ही न होता क्योंकि जगत–प्रक्रिया में क्रम हैं, गति हैं और यह क्रम और गति प्रकाश एवं विमर्श के कारण हैं, जोकि संज्ञा का लक्षण हैं और यह लक्षण शब्द से अनुविद्धता को दर्शाता हैंI

१–तत्वमीमांसीय दृष्टिकोण–

तत्त्वमीमंसीय दृष्टिकोण का यह मत है कि भर्तृहरि के दर्शन का केंद्र–बिंदु शब्द–ब्रह्म की अवधारणा का विश्लेषण करना हैI यहाँ यह समझने की बात है कि भर्तृहरि का उद्देश्य यहाँ केवल शब्द–ब्रह्म की अवधारणा का विश्लेषण करना नही था अपितु उसका साक्षात्कार करना हैI के एस अय्यर का मानना है कि भर्तृहरि की प्रत्येक अवधारणा के पीछे उनका यही मंतव्य छिपा हुआ थाI तन्द्रा पटनायक[5] तत्त्वमीमांसीय दृष्टिकोण रखती है और बताती है कि भर्तृहरि ने अपने दर्शन के प्रत्येक आयाम को भाषागत एवं साम्प्रत्ययों के रूप में रखा, अर्थात इसे तत्त्वमीमांसा का एक समझा जाना चाहिएI[6] इसी श्रृंखला में गौरीनाथ शास्त्री का भी मत भी तत्त्वमीमांसीय दृष्टिकोण से साम्य रखता है कि शब्द–ब्रह्म या शब्द–तत्त्व ही परमतत्त्व है और यह गत्यात्मक भी हैI शब्द–ब्रह्म को गत्यात्मक मानने के पीछे

[3] येनोच्चारितेन सास्त्रालांगूलककुदखुरविषाणनाम सम्प्रत्यो भवति स शब्दः I (व्याकरण महाभाष्य, प्रथम आहिनक, पृष्ठ.४.)

[4] प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः शब्द इत्युच्यतेI (व्याकरण महाभाष्य, प्रथम आहिनक, पृष्ठ.४.)

[5] तन्द्रा पटनायक भर्तृहरि दर्शन लेखिका है और उत्कल विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हैI

[6] तन्द्रा पटनायक. शब्दा : ए स्टडी ऑफ़ भर्तृहरि'ज फिलोसफी ऑफ़ लेंग्वेज. सेकेण्ड एडिशन. नईदिल्ली : डी के प्रिंटवर्ल्ड लिमिटेड, २००७, पे. १८.

कारण यह है कि वे मानते है कि शब्द अपने आप से जगत(शाब्दिक-जगत) को प्रकट करता हैI[7] राम चन्द्र पाण्डेय, यधपि अर्थ की समस्या पर विशेष रूप से अपने विचार रखते है और यह मानते है कि भर्तृहरि के दर्शन में अर्थ को तत्वमीमांसा से जोड़ कर ही देखा जाना चाहिएI[8]

२-संज्ञानात्मक दृष्टिकोण –

जहाँ तक भर्तृहरि के दर्शन को समझने की श्रृंखला में संज्ञानात्मक दृष्टिकोण का प्रश्न है तो हम इस दृष्टिकोण का आधार देवेन्द्र नाथ तिवारी[9] की पुस्तक 'दि सेन्ट्रल प्रोब्लमस ऑफ़ भर्तृहरि'ज फिलोसफी में पाते है और साथ ही साथ विमल कृष्ण मतिलाल की 'द वर्ड एंड द वर्ल्ड' और 'पर्सेप्सन' नामक दोनों पुस्तकों[10] में भी संभवतः संज्ञानात्मक दृष्टि अपनाई गयी हैI यधपि मतिलाल की इन दोनों पुस्तकों का आधार विषय भर्तृहरि के दर्शन की चर्चा करना नहीं है, अपितु विषय-वस्तु के प्रसंग के साथ इस सन्दर्भ में चिन्तन-मनन किया गया हैI मतिलाल इस संदर्भ में लिखते है कि यदि शब्द-भावना संज्ञानात्मक है, तब इसमें वाक्-शक्यता हैI वाक्-शक्यता मानव चेतना की एक अनिवार्य विशेषता है और यह बच्चों में भी पाई जाती हैI[11] देवेन्द्र नाथ तिवारी, संज्ञानात्मक दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए सर्वप्रथम दर्शन को एक संज्ञानात्मक प्रक्रिया मानते है और दर्शन को संज्ञा और भाषा में एकैकता के दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैI[12] इसी श्रृंखला में तिवारी भर्तृहरि के दर्शन का केंद्र बिंदु सत्तामक न मानकर, संज्ञानात्मक मानते हैI[13] इनके अनुसार, भर्तृहरि के लिए भाषा तत्वमीमांसीय नहीं है, बल्कि संज्ञानात्मक हैI[14] आगे तिवारी लिखते है कि भर्तृहरि के दर्शन में तत्व या वस्तु के भेद-अभेद की समस्या नहीं है, वरन भाषा द्वारा जो बुद्धि में प्रकाशित होता है, उसके कारण तत्व या वस्तु के भेद-अभेद की समस्या समझी गयी हैI[15] भर्तृहरि को अपने दर्शन में तत्वमीमांसा को अस्वीकार करने की आवश्यकता ही महसूस नहीं हुई है, क्योंकि भर्तृहरि ने अपने दर्शन में भाषा को इतना महत्व दिया है कि भाषा द्वारा बुद्धि में जो भी प्रकाशित या प्रकट होता है, का चिंतन किया हैI[16] आगे तिवारी लिखते है कि भर्तृहरि तत्व को दर्शन का विषय

---

[7] गौरीनाथ शास्त्री. शब्दार्थमीमांसा. हिंदी अनु- मिथिलेश चतुर्वेदी. प्रथम संस्करण. वाराणसी : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, १९९२, पृ. २३.

[8] राम चन्द्र पाण्डेय. दि प्रोब्लम ऑफ़ मीनिंग इन इंडियन फिलोसफी. फर्स्ट एडिशन. देल्ही : मोतीलाल बनारसीदास, १९६३.

[9] धर्म एवं दर्शन विभाग बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रोफ़ेसर हैI

[10]

[11] If it is cognitive, then it has speech-potential. The speech-potency is an essential trait of human consciousness. Even babies would have it. B.K Matilal. Perception, 1986, p.391.

[12] देवेन्द्र नाथ तिवारी, दि सेन्ट्रल प्रोब्लम्स ऑफ़ भर्तृहरि'ज फिलोसफी. पे.६.

[13] वही, पे.४४.

[14] वही, पे.४३.

[15] वही, पे. ४४.

[16] वही, पे. ४०४.

नहीं मानते, वरन यह साधना का विषय है और तत्व को भी भाषा द्वारा प्रकाशित विषय का आधार माना हैI[17]

शब्दब्रह्म की अवधारणा –

शब्दब्रह्म की अवधारणा को भर्तृहरि वाक्यपदीयम की प्रथम कारिका में ही प्रस्तुत करते हैं, इसका कारण यह दीखता हैं शब्दब्रह्म की अवधारणा भर्तृहरि के द्वारा प्रस्तुत अन्य अवधारणाओ के मूल में निहित हैं, अतः प्रथमतया उसका ज्ञान आवश्यक हैं, इसके साथ-साथ भर्तृहरि का सिद्धांतपक्ष होने पर भी इसका प्रथमतः वर्णन आवश्यक हैं I

वाक्यपदीयम की प्रथम कारिका शब्दब्रह्म को प्रस्तुत करती हैं-

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरमI

विवर्तेअर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतःII (वाक्यपदीयम, ब्रह्मकाण्ड,१)

"अर्थात जो शब्दतत्व उत्पत्ति और विनाश रहित है, जो विकारहीन और व्यापक है तथा जिससे संसार का सारा क्रियाकलाप संचालित होता है, वह शब्दतत्वात्मक अक्षर ब्रह्म अर्थ के रूप में विवर्तित होता हैI

यदि हम इस कारिका को साधारण शब्दों में समझे तो, शब्दब्रह्म वह है जो उत्पत्ति और नाश से परे, जिससे भाषा निसृत होती है और अर्थभाव के द्वारा जिससे जगत-प्रक्रिया विवर्तित होती हैI

हमारे प्रतिदिन के अनुभव के संदर्भ में यह स्पष्ट समझा जा सकता हैं, कि शब्दब्रह्म विभिन्न पदार्थो को प्रकाशित करने वाला सर्वोपरि प्रकाश हैंI यह सर्वथा निर्विवाद तथ्य हैं, कि हमारी चिंतन-धारा में आने वाला प्रत्येक भाव एक व्यक्त शब्द-रूप के द्वारा ही निर्धारित होता हैंI[18] कोई जड़ तथ्य यदि हमारी बुद्धि में नही पहुँच सकता तो पूर्णतः सत्तावान होते हुए भी उसकी स्थिति असत से बेहतर नहीI ऐसा तथ्य, जो किसी व्यक्त-शब्दरूप से नही जुड़ा हैं, हमारी बुद्धि का विषय नही हो सकता और मिथ्या माना जाता हैंI दूसरी ओर शशश्रंग या गन्धर्वनगर जैसी मिथ्या-कल्पनाये भी शब्द-अभिव्यक्ति के माध्यम से कल्पित होने पर सत्तावान प्रतीत होती हैं और तार्किक अभिकथन के योग्य हो जाती हैंI[19] किसी पदार्थ की सत्ता हमारे प्रत्यक्ष या अनुमानिक ज्ञान से असिद्ध होने पर एक शब्द-रूप का प्रयोग इसे अस्तित्वात्मक स्तर देता सा प्रतीत होता हैं और इसे सम्प्रेषण के योग्य पदार्थ बना देता हैंI बाह्य-वस्तुजगत में किसी अनुरूप पदार्थ से रहित

---

[17] वही, पे. xii.

[1818] तस्मादर्थविधाः सर्वाः शब्दमात्राः सुनिश्चितः I वाक्यपदीयम, १.१२० I

[19] सदपि व्यव्हारेनाणुपगृहीतमसता तुल्यम् I अत्यन्तासच्च लोके शशविषIणIदि प्राप्ताविर्भावतिरोभावम च गन्धर्वनगरादि वाचा समुत्थाप्य्मानं मुख्यसत्तायुक्तमिव तेषु तेषु कार्येषु प्रत्यवभासते I पु. रा., पृष्ठ. ४६ I

शुद्ध बौद्धिक–पदार्थ भी व्यक्त–शब्दरूपों के माध्यम से अभिव्यक्त होने पर वास्तविकता के सजीव और सुस्पष्ट स्पर्श के साथ हमारे सम्मुख विधमान प्रतीत होता हैं I प्रत्यक्ष ज्ञान के आधार पर हम जानते हैं, कि खरगोश के सींग नही होते हैं और आकाश से पुष्प नही टपकते हैं, फिर हम इसे नकार नही सकते, कि ये शब्दरूप हमारे मन के सम्मुख कुछ विशेष पदार्थो को चित्रित करते हैं, जिनका उल्लेख प्रायः गंभीर वार्तालाप में किया जाता हैंI इस प्रकार संसार में ऐसा कोई बोध नही है जो शब्द का अनुगम किये बिना संभव हो पाता होI[20]

भर्तृहरि लिखते है कि–

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमाद्रते I
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते II वाक्यपदीयम. १.१२३II

अर्थात संसार में ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जो भाषा में अनुविद्ध नहीं हो I यही कारण है कि शब्द को चेतना कहते हुए भर्तृहरि ने ज्ञानात्मा (संज्ञा का कारण) और वागात्मा (वाचकता का कारण) नामक शब्दों का प्रयोग किया हैI भर्तृहरि के लिए ज्ञानात्मा और वागात्मा में तादात्मकता हैI[21] तादात्मकता का यहाँ अर्थ यह है कि ज्ञानात्मा और वागात्मा[22] में अभिन्नता है क्योंकि संज्ञा के दृष्टिकोण से इसे वागात्मा और वाक् के दृष्टिकोण से इसे वागात्मा कहा जाता हैI

वाक् के संदर्भ में महाभाष्य का कथन है,"***चत्वारि श्रृडगा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अम्य I त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या आ विवेश"***[23] इस कथन के "चत्वारि श्रृंगा" वाक्यांश से सम्बन्धित महाभाष्य दो बाते प्रस्तुत करता हैI पहला, चार सींग नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात चार पदराशियाँ हैI दूसरा, वाक् के चार स्तर या पद है, जिनमें से पहला मनुष्य द्वारा बोला जाता है और अन्य तीन गुहा(अंतर) में उपस्थित हैI

महाभाष्य में वाक् के चार स्तर/पद परवर्ती व्याकरण दर्शन में वाक् के परा, पश्यन्ति, मध्यमा वैखरी के रूप में प्रकट होते हैI[24] भर्तृहरि के दर्शन में वाक् के चार स्तर/पाद है या तीन, इस संदर्भ में विद्वानों में मतभेद हैI वाक्यपदीयम के प्रथम काण्ड ब्रह्मकाण्ड में वाक् के तीन स्तरों/पदों का वर्णन है जोकि इसप्रकार है– ,

वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्तयाश्चैतदद भूतम् I

---

[21] वाग्रूपता चेदुत्क्रामेदवबोधस्य शाश्वती I
न प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी II (वाक्यपदीयम १.१२४)

[22] वागात्मा एक तात्विक समानिधिकरण के रूप में माना गया है जिसका आधार तत्त्वमीमांसक है और यह वाचकता का कारण हैI

[23] महाभाष्य, (प्रथम आहिनक, पृ. १२)

[24] ऐसा संभवतः कहा जा सकता है कि वाक् के चार स्तर/पाद महाभाष्य के पहले ही इनका संदर्भ देखा जा सकता हैI जैसाकि ऋग्वेद में वाक् से सम्बन्धित आत्मप्रशंसा के कथनों से समझा जा सकता है कि वाक् श्रृष्टि को उत्पन्न करती है, नियमन करती हैI वाक् प्राणियों को व्यवहार में निपुण करती हैI दृष्टव्य – ऋग्वेद वागाम्भ्रणी सूक्त (१.१२५)

अनेकतीर्थभेदायात्रय्या वाचः परं पदम् II

(वाक्यपदीयम, ब्रह्मकाण्ड. १३३)

इस कारिका आधार पर विद्वानों ने अपने अलग–अलग मतों को प्रस्तुत किया हैI गौरीनाथ शास्त्री अपनी किताब 'शब्दार्थमीमांसा' में वाणी के तीन ही स्तरों/पदों को मानते हैI वे शब्दब्रह्म को पश्यन्ति के अंतर्गत ही रखते है, जैसाकि वो लिखते है कि," पश्यन्ति, जो शब्दब्रह्म ही है, एक है एवम् अविभाज्य हैI"[25] देवेन्द्र नाथ तिवारी भी भर्तृहरि के दर्शन में पश्यन्ति को मानते है और पश्यन्ति को विचारशब्द–रूप के तात्विक समानाधिकरण के रूप में स्वीकार करते हैI इस संदर्भ में वे हेलाराज के मत का उल्लेख करते है कि हेलाराज ने परा और पश्यन्ति को एक माना हैI[26] यधपि हेलाराज परा को योगियों के संदर्भ में मानते है और योगियों को पश्यन्ति के स्तर पर भी भेद–ज्ञान होता हैI वही सामान्य–जन के संदर्भ में परा–पश्यन्ति में भेद मानते हैI आगे तिवारी लिखते है कि यदि परा को स्वीकृति दी जाये तो अनावस्था दोष उत्पन्न होगा क्योंकि पश्यन्ति उन लोगो के लिए स्वीकार की गयी है जो विचार रूप शब्द का तात्विक समानाधिकरण खोजते है इसलिए यदि एक अनुमान पर दूसरा अनुमान लगाते है तो दोष होना स्वाभाविक हैI इसप्रकार वो परा को भर्तृहरि के दर्शन में स्वीकार नहीं करते हैI मध्यमा और वैखरी में ऐसा कोई विवाद नहीं देखा गया है जितना परा और पश्यन्ति परI मध्यमा सूक्ष्म शब्द हैI इसका अवलोकन संज्ञानात्मक आधार पर किया जाता हैI मध्यमा स्तर पर ही संज्ञानात्मक इकाई(शब्द और अर्थ) प्रकाशित होती है अर्थात शब्द और अर्थ का प्रकाशन होता हैI इसे समझने के लिए हम दो स्तरों पर विभाजित कर लेते हैI १– वक्ता के स्तर पर, जब हमें बोलने की विवक्षा होती है तब स्फोट ही कम्पन के रूप में कंठ, तालु, जीभ से टकराकर उच्चरित ध्वनियों शब्द बाहर अभिव्यक्त होता हैI २– श्रोता के स्तर पर, श्रोता उच्चरित ध्वनियों को सुनते हुए स्फोट की अभिव्यक्ति पाते हैI मध्यमा शब्द विचार रूप शब्द है और यही स्फोट हैI

तीसरे स्तर पर, भर्तृहरि वैखरी को मानते हैI यह वाणी का स्थूल स्तर हैI वैखरी के द्वारा मनुष्य दैनिक जीवन में अर्थ को संप्रेषित करते है जो उनके द्वारा उच्चरित वैखरी शब्दों(अ,ब स इत्यादि) के द्वारा सुनी भी जाती हैI[27] जब बोलने की इच्छा होती है तब प्रकाशित स्फोट के कारण ही वैखरी ही एक व्यक्ति से दूसरी व्यक्ति के लिए सम्प्रेषण का कारण बनती हैI दार्शनिक रूप से, वैखरी अर्थ–प्रकाशन इकाई नहीं है लेकिन इसके द्वारा प्रकाशित अर्थ को करण–अभिघात उच्चारण अंगो से बाहर सुना जाता है और वैखरी का प्रत्यक्ष भी होता हैI वैखरी इस रूप में भर्तृहरि के भाषा–चिंतन में महत्पूर्ण है क्योंकि स्फोट इनके बिना बाहर अभिव्यक्त नहीं हो सकता

[25] गौरीनाथ शास्त्री, शब्दार्थमीमांसा, पृ.६१.
[26] देवेन्द्र नाथ तिवारी. दि सेन्ट्रल प्रोब्लम ऑफ़ भर्तृहरि'ज फिलोसफी. दिल्ली आईसीपीआर. २००८, पे.८१–८२.
[27] वैखरी वाचो मनुष्यः वदन्ति I

हैI 'भर्तृहरि ने स्फोट और शब्द में अंतर करते हैI वह स्फोट को विचार रूप शब्द/मध्यमा शब्द और वैखरी को ध्वनि रूप शब्द कहते हैI'[28]

स्फोट– सिद्धांत–

यधपि स्फोट सिद्धांत को वाक् के स्तरों अर्थात पश्यन्ति, मध्यमा और वैखरी से अलग करके नहीं देखा जा सकता है क्योंकि स्फोट कोई अलग सत्ता या तत्वमीमांसक सत्ता नहीं हैI स्फोट तो मध्यमा वाक् के अंतर्गत ही माना गया है जिसको अर्थ–प्रकाशन इकाई कहा जाता हैI इसी श्रृंखला में पश्यन्ति को विचाररूप शब्द का तात्विक–समानाधिकरण और वही वैखरी को स्फोट अर्थात अर्थ को उच्चरित ध्वनियों के माध्यम से सम्प्रेषण का आधार माना गया हैI

संस्कृत व्याकरण में छै वेदांगो की चर्चा मिलती हैI इन छै वेदांगो के अंतर्गत व्याकरण को भी रखा गया हैI भर्तृहरि के अनुसार, व्याकरण उन छै वेदांग में सबसे महत्वपूर्ण वेदांग हैI[29] वेदों में यह विचार है कि भाषा और व्याकरण से सम्बन्धित दर्शन को पाणिनि और व्याडि ने विकसित किया है, लेकिन इनकी अपनी–अपनी भिन्नात्मक सोच इनके परिपेक्ष्य को अलग–अलग करती हैI पाणिनि व्याडि के समकालीन(छठी शताब्दी) हैI इन्होने शब्दों, अर्थो और इनके बीच संबंधो के नियम तैयार किये और उनको सुव्यवस्थित, वर्गीकृत, व्युत्पत्ति, पद परिभाषा और उनका विश्लेषण कियाI कुल मिलकर बिना किसी चीज को छोड़े और परम्परा(आगम) से प्रारम्भ करते हुए वैखरी वाणी(जिसे हम पढने, बोलने और लिखने में प्रयोग करते हैI) को व्याख्या सहित हमारे समक्ष रखाI वही व्याडि अपने ग्रन्थ 'संग्रह' में भाषा और व्याकरण को दार्शनिक परिपेक्ष्य में देखते है जोकि अब उपलब्ध नहीं हैI ऐसा देखा गया है कि पतंजलि अपने 'महाभाष्य' में और भर्तृहरि अक्सर उनकी कारिकाएँ उदधृत करते हैI पाणिनि ने अपनी 'अष्टाध्यायी' में उल्लिखित किया है कि व्याडि और वाज्यप्यायन वेदागम के दार्शनिक पक्षों की वकालत करते हैI भर्तृहरि वाक्यपदीयम में तीन सिद्धांतो को क्रमशः तीन अध्यायों में जिसमे दो अलग अध्याय द्रव्य–समुद्देश और भूयोद्रव्य–समुद्देश जो व्याडि के द्रव्य–सिद्धांत में शब्द का अर्थ और तीसरा अध्याय जाति–समुद्देश, जो सामान्य पर है, यह सिद्धांत प्राचीन ऋषि वाज्यप्यायन द्वारा प्रस्तुत किया गया हैI इनके अलावा ऋषि स्फोटायन और निरुक्तकार यास्क ने भी परम्परा में दार्शनिक पक्षों पर बात की हैI यधपि ऋषि स्फोटायन का कोई लिखित ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है, लेकिन पाणिनि ने अपनी 'अष्टाध्यायी' में इनका नाम का उल्लेख किया हैI[30] पाणिनि का ऐसा मानना है कि शायद स्फोटायन ही भाषा के स्फोट सिद्धांत के प्रतिपादक है जो बाद में विकसित हुई हैI निरुक्तकार

[28] डैनामिक्स ऑफ़ दि लेंग्वेज : फिलोसोफी ऑफ़ दि वर्ल्ड ऑफ़ दि वर्ड्स, वोल्यूम २, डी के प्रिंटवर्ल्ड, २०२२.
[29] प्रधानं च सदस्वान्गेसु व्याकरणं I हरिवृत्ति की वाक्यपदीयम
[30] अष्टाध्यायी. ६.१.१२३.

मुनि यास्क ने प्राथमिक रूप से व्युत्पत्ति से सम्बन्धित क्लिष्ट वैदिक पदों की व्याख्या की है और उन्हें परम्परा के दार्शनिक वाक्यों में शामिल किया हैI

प्रतिभा (अर्थ)-

वास्तव में प्रतिभा के स्वरुप को स्फोट से अलग नहीं समझा जा सकता है, क्योंकि भर्तृहरि मानते है कि शब्द स्फोटात्मक और अर्थ प्रतिभात्मक होता हैI यही कारण है इन दोनों को अलग से नहीं समझा नहीं जा सकता हैI वैयाकरण के लिए, वाक्य एक अविभाज्य और बोध की वास्तविक इकाई है अर्थात स्फोट/भाषा/शब्द/वाक्य और वाक्यार्थ जो अभिन्न रूप से प्रकाशित होता है, वही प्रतिभा हैI भर्तृहरि प्रतिभा शब्द का प्रयोग वाक्यार्थ जो बोध का प्रकाश/स्फुरण, स्फोट द्वारा प्रकाशित होता हैI इसप्रकार स्फोट चेतना का प्रकाश और प्रतिभा अभिन्न रूप से उस शब्द का अर्थ का हैI[31] जब तक शब्द/वाक्य/भाषा अपने स्वरुप को नहीं प्रकाशित कर देता है तब तक उस शब्द/वाक्य/कथन/भाषा के अर्थ को जानना या प्रकाशित होना संभव ही नहीं है यही कारण है शब्द और अर्थ उपचार-सत्ता के रूप में अविभाज्य हैI उपचार-सत्ता शब्द और अर्थ बोध के विषय है, हमारा दार्शनिक चिंतन यही तक सीमित है क्योंकि दार्शनिक हमेशा बोध की दुनिया में जीने वाला प्राणी हैI

प्रतिभा (वाक्यार्थ) उपचार-सत्ता जो अभिन्न रूप से भाषा/शब्द (स्फोट) द्वारा जानी जाती हैI भर्तृहरि प्रतिभा को संकेतक 'यह-वह' नहीं मानते है, क्योंकि इसका प्रत्यक्ष नहीं किया जा सकता है अप्रत्यक्षता के कारण इसकी व्याप्ति भी संभव नहीं है इसलिए इसका अनुमान नहीं किया जा सकता हैI इसको केवल इस आधार पर नहीं मना किया जा सकता है कि इसको सिद्ध किया जाना का आधार ज्ञानमीमांसक हैI यह प्रकाश और अपने आप में बोध होने के कारण , इसलिए अप्रत्यक्षता के आधार पर इसे इसके अस्तित्व को अस्वीकार नही किया जा सकता हैI यह प्रकाशित बोध (वेरीडिकल कोग्निशन) है और स्फोट द्वारा प्रकाशित होता हैI प्रतिभा को यदि माना भी न जाये तब उसके लिए प्रकाशित बोध की जरुरत होगी कि वह नहीं हैI हमारी आत्म-चेतना के विषय होने के कारण, प्रतिभा आत्म-सिद्ध हैI[32]

स्फोट और ध्वनि-

भर्तृहरि के भाषा-चिंतन में जितना स्फोट और प्रतिभा को महत्वपूर्ण माना गया है उतना ही ध्वनि को भी महत्वपूर्ण माना गया हैI ध्वनि के बिना सामान्यजन की सम्प्रेषण की प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती हैI अब हमें यहाँ यह समझना है कि आखिर स्फोट और

[31] वैयाकरणास्यखण्ड: एवैको नाव्यवह शब्दाः स्फोटलक्षणों वाक्यं प्रतिभा वा वाक्यार्थ II वा. २.1-२.
[32] अंतकरण-सिद्ध

ध्वनि का आपस में क्या सम्बन्ध है और स्फोट और ध्वनि कैसे लोक–व्यवहार को आसान बनाते है। इसके लिए पाणिनिशिक्षा में कहा गया है कि–

आत्मा बुद्ध्या समेत्यार्थान मनो युड.क्ते विवक्षया I
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम II
सोदीर्णों मूधर्न्यभिहतो वक्त्रामापध मारुतः II
वर्णान जनयते I[33]

अर्थात आत्मा बुद्धि से संयुक्त होकर अर्थ बोधन की इच्छा से मन को युक्त करता हैI मन शरीराग्नि को प्रेरणा देता है, वह प्राणवायु को प्रेरित करता हैI प्राणवायु ऊपर उठकर शिर में टकराती है, वहां से मुख के मार्ग में आकर वर्णों को उत्पन्न करती हैI

वाक्य विचार–

यधपि भर्तृहरि के भाषा चिंतन के अंतर्गत भाषा की इकाई के रूप में वाक्य को माना गया हैI यहाँ यह बात बड़ी ध्यान योग्य है कि वाक्य स्फोट से भिन्न कोई सत्ता नहीं है, चेतना में जो भी प्रकाशित होता है वह वाक्य के रूप में ही होता है, जिसे अविभाज्य बोध भी कहा गया हैI भर्तृहरि ने अपने समय में प्रचलित वाक्य से सम्बन्धित सभी विचारो को प्रस्तुत किया है लेकिन अध्याय की दृष्टि से यहाँ भर्तृहरि द्वारा अपने वाक्य सम्बन्धी विचार को प्रस्तुत किया जायेगा जिसको उन्होंने सखण्डवाद और अखण्डवाद कहा हैI इसलिए जो भी विचार भर्तृहरि द्वारा प्रस्तुत किये गये है उनकी चर्चा अध्याय चतुर्थ में की जाएगीI

भाषा चिंतन के अंतर्गत भाषा की इकाइयों में यह होड़ लगी हुई है कि अर्थ वर्ण, अथवा पद अथवा वाक्य से पूर्ण होता हैI यह प्रश्न महत्वपूर्ण भी है कि भाषा की ऐसी कौन सी इकाई है जो अपने आप में सम्पूर्ण अर्थ दे सकती है तब वह वर्ण है अथवा पद है अथवा वाक्य है? तब भर्तृहरि का उत्तर है कि वाक्य ही भाषा की ऐसी इकाई है जो अपने में सम्पूर्ण अर्थ देता हैI वाक्य को भाषा की सम्पूर्ण अर्थ देने वाली वास्तविक इकाई मानने का आधार सम्प्रेषण का पूर्ण होना है अर्थात बोध का पूर्ण होना हैI यदि सम्प्रेषण वाक्य द्वारा पूर्ण होता है तब वे भाषा की वास्तविक इकाई हैI वाक्य बुद्धिस्थ और अविभाज्य इकाई है जो विवक्षा के दौरान बोध को पूर्ण करता हैI भर्तृहरि का कहना है यधपि वाक्य अविभाज्य और बुद्धिस्थ है लेकिन जिनको इस अविभाज्य स्फोट का भान नहीं हो पाता है उनके लिए कृत्रिम विश्लेषण का उपाय किया गया है अर्थात यह कृत्रिम उपाय अपोद्धार पद्धति से किया जाता है, यह उनके लिए जो भाषा की सीखने की प्रारंभ स्थिति में है या जिन्हें यह अविभाज्य अखण्डता समझने में दुष्कर है उनके लिए इस अपोद्धार पद्धति के माध्यम से एक अविभाज्य वाक्य को विभिन्न अवयवों जैसे वाक्य को

[33] कपिलदेव शास्त्री

पद में, पद को धातु और धातु को प्रत्यय, उपसर्ग में, इसप्रकार अविभाज्य वाक्य को वाक्य–विन्यास अखंडता के माध्यम से समझा जाता है, लेकिन यह बस एक कृत्रिम उपायमात्र ही है, जिससे वाक्य को समझा जा सकेI यह विभाजन अविभाज्य बोध को समझने के लिए जो इसको अवयवो में समझते हैI[34] इनका मानना है कि पद अविभाज्य वाक्य के अपोद्धार पद्धति से उत्पन्न होते हैI इसे उदाहरण के माध्यम से समझते है जैसे एक वाक्य है 'गौः अस्ति' इसका तात्पर्य है गाय हैI यह वाक्य अविभाज्य है और अपना अर्थ भी व्यक्त कर रहा हैI लेकिन यदि यह कहा जाये कि गौः और अस्ति को अलग–अलग रूप में देखिये और अर्थ कीजिये तो क्या ऐसा सम्भव हैI तब उत्तर आता है नहीं क्योंकि वाक्य एक अवयवरहित, अविभाज्य इकाई है और अपना पूर्णरूप से बोध भी करा रहा है लेकिन पद से बोध होना असंभव हैI यही नहीं भर्तृहरि कहते है कि यदि एक पद भी बोध को या विवक्षा को पूर्ण करता है तो वो भी वाक्य ही है क्योंकि वाक्य से लोक में व्यवहार संभव हैI भर्तृहरि अपने भाषा चिंतन के अंतर्गत भाषा को समझने के लिए संज्ञानात्मक और वाक्य–विन्यास दोनों दृष्टिकोण को स्वीकार करते हैI[35] यधपि भर्तृहरि का मानना है कि कोई भी दार्शनिक हो वह वाक्य से ही लोकव्यवहार से मानेगा लेकिन उसका वाक्य से वाक्यार्थ की प्रक्रिया की यात्रा में जरुर अंतर होगा, और यही अंतर किसी भी विचार को समझने में कठिनाई भी पैदा करता हैI भर्तृहरि के अनुसार वाक्य के विचार को समझने के लिए इन तीन वाक्य की महत्वपूर्ण परिभाषा को समझना आवश्यक है जोकि निम्नलिखित है–

शब्द और अर्थ बीच सम्बन्ध –

यधपि भर्तृहरि शब्द और अर्थ के बीच सम्बन्ध की व्याख्या सम्बन्धसमुद्देश में करते हैI इनका मानना है कि सम्बन्ध कोई पदार्थ नहीं है जिसका हम प्रत्यक्ष कर सकते है यह किसी न किसी पर निर्भर होता हैI भर्तृहरि शब्दों में नित्य योग्यता सम्बन्ध मानते हैI शब्द की योग्यता ही अर्थ को अभिव्यक्त करती है यही शब्द और अर्थ के बीच सम्बन्ध हैI भाषा/शब्दों का प्रयोग अनादिकाल से हो रहा है, हम नहीं जानते है वह पहला व्यक्ति कौन था जिसने भाषा का प्रयोग किया होगा, इसलिए भर्तृहरि शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को अपौरुषेय और नित्य मानते है और शब्द भी नित्य हैI इसप्रकार भर्तृहरि के अनुसार शब्द की नित्य योग्यता ही अर्थ को व्यक्त करता हैI इस संदर्भ में योग्यता न ही वाचक है और न वाच्य है बल्कि वाचक की योग्यता हैI यह शब्द की योग्यता है और योग्यता

[34] वा. २.२३८.

[35] देवेन्द्र नाथ तिवारी, दि सेन्ट्रलस प्रोब्लम्स ऑफ़ भर्तृहरि'ज फिलोसफी, पे.१४९ आईसीपीआर नईदिल्ली, २००८.

ही सम्बन्ध है इससे अलग इसका कोई और लक्षण नहीं है।[36] भर्तृहरि कहते है कि सम्बन्ध न तो कोई वस्तु है और न कोई पदार्थ है, यह तो बस नित्य निर्भर है। यहाँ नैयायिको के यहाँ भी योग्यता को माना है इसलिए उस योग्यता से भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है। उनके यहाँ कहना है कि वाक्य के पदों में क्रम योग्यता से लबालब होना चाहिए ताकि वाक्य का अर्थ में कोई विरोधाभास न हो । वो एक उदाहरण से योग्यता को समझते है जैसे आग से खेत सींचो, इसके लिए नैयायिको का मानना है कि वाक्य में वाक्य की अनिवार्य शर्त पूर्ण होनी चाहिए तभी वाक्य को प्रमाण माना जा सकता है। भर्तृहरि का मानना है कि आग से सींचो वाक्य में पूर्ण अर्थ तो हो रहा है, भाषा में नित्य योग्यता विधमान है इसलिए इस वाक्य में योग्यता के आधार पर विरोधभासी अर्थ प्रकाशित हो रहा है, अन्यथा हम कैसे जान सकते थे कि ये विरोधाभासी है? भर्तृहरि का मानना है कि भाषा/शब्द कभी भी नित्य योग्यता के बिना नहीं होते है। इसलिए जो प्रदत्त है इनके लिए शब्द और अर्थ में सम्बन्ध बदलते नहीं है।[37] भाषा/शब्द की योग्यता उत्पन्न नहीं होती है, बल्कि वृद्ध–व्यवहार से जानी जाती है।[38] यह शब्द की योग्यता है की शब्द को ऐसा कहा जाता है।

भर्तृहरि ने योग्यता के विचार को इन्द्रियों की नित्य योग्यता से तुलना करते हुए समझाया है। उनका कहना है जिस प्रकार चक्षु की योग्यता है कि वह रूप और रंग देखने में योग्य है जबकि अन्य इन्द्रियों से ऐसा संभव नहीं है या उनमे ये योग्यता नहीं है , वही चक्षु में अन्य इन्द्रियों की भांति उनके विषय में देखने में योग्य नही है। उसी प्रकार शब्द गौ की शब्द अश्व के अर्थ देने की योग्यता विधमान नहीं है। इसलिए शब्द गौ और अश्व अपने–अपने अर्थ को क्रमशः अपने नियत अर्थ को अभिव्यक्त करने की योग्यता है। शब्द गौ और अश्व की योग्यता को उनके आलावा कोई और नहीं बता सकता है। यही कारण है कि योग्यता की नित्य निर्भरता नित्य योग्यता पर ही होती है जिसके लिए भर्तृहरि ने योग्यता सम्बन्ध बताया है।

[36] वा., ३/३/३१.

[37] हेलाराज टीका, ३.३.४

[38] इन्द्रियानाम स्वविषयेस्वानादिरयोग्यता यथा अनादिरअर्थे शब्दानाम संबंधो योग्यता तथा । वही, ३.३.२९.

संदर्भ–सूची :–

- दासगुप्त,सुरेन्द्रनाथ. *भारतीय दर्शन का इतिहास(प्रथम भाग)*. हिंदी अनु– कलानाथ शास्त्री एवं सुधीर कुमार. चतुर्थ संस्करण. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, २०११.
- अय्यर, के एस. *भर्तृहरि: प्राचीन टिकाओ के प्रकाश में वाक्यपदीय का एक अध्ययन*. हिंदी अनु– रामचंद्र द्वेवेदी. प्रथम संस्करण. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, १९८१.
- वर्मा, सत्यकाम. *भाषातत्त्व और वाक्यपदीय*. दिल्ली: भारतीय प्रकाशन, १९६८.
- शास्त्री, गौरीनाथ. *शब्दार्थमीमांसा.* हिंदी अनु– मिथिलेश चतुर्वेदी. प्रथम संस्करण. वाराणसी: सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविधालय, ११९२.
- वाक्यपदीयम(ब्रह्मकाण्ड): *भर्तृहरि*. हिंदी अनु– शिवशंकर अवस्थी. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन, २०१०.
- व्याकरण महाभाष्य(प्रथम आह्निकत्रय)*: पतंजलि*. हिंदी अनु. एवं व्याख्या– चारुदेव शास्त्री. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास, २००९.
- अवस्थी, बच्चूलाल "ज्ञान". *भारतीय–दर्शन–ब्रह्त्कोश.* प्रथम सं. दिल्ली: शारदा पब्लिशिंग हाउस, २०१२.
- त्रिपाठी, राधावल्लभ. *भर्तृहरि और उनका भाषादर्शन*. वाणी और सीएसडीएस का संयुक्त प्रकाशन. दिल्ली, २०१७.
- Dravid, Raja Ram. The *Problem of Universals in Indian Philosophy*. Second Ed. Delhi: Motilal Banarsidass, 2001.
- Matilal, Bimal Krishna. Perception: *The word and The World*. Delhi: Oxford University Press, 1990.
- Pandeya, R C. *The Problem of Meaning in Indian Philosophy*. First Ed, Delhi: Motilal Banarsidass, 1963.
- Tiwari, Devendra Nath. *The Central Problems of Bhartrhhari's Philosophy*. First Ed. Delhi: ICPR, 2008.